लोकतंत्र और सामाजिक न्याय

(Democracy and social Justice)

राजीव चौधरी

समीक्षक

विभाग– लोक प्रषासन

मगध विष्वविद्यालय, बोधगया, बिहार (भारत)

संपादन – डॉ गोपाल प्रसाद, पृ0 176 मूल्य 600.00

संस्करण – 2009

प्रकाषक – यूनिवर्सिटी पब्लिकेषन

22/4735, प्रकाष दीप, अंसारी रोड

दरियागंज, नई दिल्ली– 11002

आज 21वीं सदी का भारतीय नागरिक ग्राम, पंचायत से लेकर सड़क, कलक्टर, समाहरणालय, राज्यों के विधान मण्डल और दिल्ली के संसद भवन तक सामाजिक न्याय की प्राप्ति के लिये गुहार लगाये जा रहे हैं। भारत वासियों की स्वतंत्रता विरासत में मिली : भारत की आजादी के 68 वर्ष वित जाने तक भारतीय संघीय व्यवस्था न्याय की प्राप्ति का अधिकार कानूनी रूप में दिया, लेकिन आज तक जाति, रंग, वर्ण, क्षेत्र, समुदाय कुरुरता जैसी अन्य सामाजिक बुराईयों के उन्मुलन नहीं हो सका। भारत की पावन धरती पर कई सामाज शास्त्रीयों का जन्म हुआ, उनका आंदोलन ने तो कुछ समय तक लोगों के मानसिकता में परिवर्तन लाया, लेकिन सामाजिक बुराईयों का पूर्ण रूप में उन्मूलन नहीं हो सका। हमारे देष में औद्योगिक विकास, आर्थिक विकास, शैक्षिणिक विकास, कानून का संषोधन, प्रषासनिक, राजनैतिक के रूप में तो विकास हुआ, परन्तु अभी भी देष की कुल आबादी का दो तिहाई प्रतिषत नागरिक को मानसिक पड़ताड़ना से मुक्ती नहीं मिली है, राजनीतिक, प्रषासनिक शैक्षणिक आर्थिक, सामाजिक, प्रकृति डॉ0 गोपाल प्रसाद के द्वारा सम्पादितः लोकतंत्र और सामाजिक न्याय की प्रकृति तथा उसकी गत्यात्मकता का गहन अध्ययन प्रस्तुत करती है।

- **शोधार्थी** : राजीव चौधरी, विभाग–लोक प्रषासन, मगध विष्वविद्यालय बोधगया, बिहार (भारत)
- **शोध निर्देषकः** डॉ0 रामलखन प्रसाद, एसोसिएट, सेवानिवृत्त प्रोफेसर,

विभाग–राजनीतिषास्त्र, मगध विष्वविद्यालय बोधगया, बिहार (भारत)

प्रस्तुतः पुस्तक में पंद्रह अध्याय है, प्रथम अध्याय में, लोकतंत्र की अवधारणा एवं निहितार्थ की वास्तविक लोकतांत्रिक संस्कृतिक परिस्थितयों को वास्तविक चित्रण यह बताता है कि लोकतांत्रिक शासन प्रणाली में, राजनीतिक पद किसी की वर्ग की बपौती नहीं है, अन्तिम व्यक्ति को विकास करने की क्षमता एवं अवसर प्रदान करता है, यह अपने लचीलापन, परिवर्तन शीलता एवं नागरिक स्वतंत्रताओं के लिए सर्वविदित है, लोकतंत्र एक मात्र शासन प्रणाली है, जिसमें सभी का योग्यता के अनुसार नेतृत्व, सहभागिता, स्वतंत्र विकास और विरोध करने का अवसर मिलता है, इस अध्याय में लोकतंत्र में सभी वर्ग जाति समुदायों को एक समान कानूनी अधिकार प्राप्त करने का अवसर मिलता है।

पुस्तक का द्वितीय अध्याय – न्याय की संकल्पना में साामाजिकह न्याय पृष्ट 36–43 तक में यह विषलेषित करने का प्रयास किया गया है कि ”भारतीय सम्यता और संस्कृति में चार वर्ण (ब्रह्माण, क्षत्रिय, वैष्य, शुद्र) चार आश्रम (वाला, गृहस्थ, वानप्रस्थ एवं सन्यास) राज्य के चार तत्व (जनसंख्या, भूमि, सरकार, सम्प्रभुता) प्रसद्धि एवं महत्वपूर्ण है। लोकतंत्र के चार स्तम्भ स्वतंत्रता, समानता, बंधुत्व एवं न्याय है जिनके बिना व्यक्ति एवं समाज का विकास अधूरा है। न्याय राज्य और समाज की मूलभूत विषेषता है, इसकी वर्णन की गई है।“

पुस्तक का तृतीय अध्याय पृष्ट– 44–49 में, सामाजिक न्याय और डॉ0 अम्बेडकर पर विष्लेषित करने का प्रयास किया गया है कि ”भारतीय सभ्यता और संस्कृति में जाति छूत–अछूत स्वराज में समझे जाते हैं तो फिर ऐसे स्वराज का लाभ, क्या? कहने का अर्थ यह है कि इस समाज में रहने वाले व्यक्ति जब मनुष्य योनि में जन्म लिया तो फिर इसमें छूत और अछूत का ढ़ोंग रच कर किसी खास वर्ग वर्ण जाति को पषुतुल्य जीवन जीने के क्यों प्रेरित किया जाता है, इस में फिर समाजिक न्याय है कहा, इसकी विषद वर्णन किया गया है।

पुस्तक का चतुर्थ अध्याय पृ0–50–56 में ”लोकतंत्र एवं पंचायती राज पर प्रकाष डाला गया है, ”यह जीवन मात्र की अभिलाषा है कि वह किसी वर्ण अधिपत्य स्वीकार करने को सहज रूप से तैयार नहीं होता फिर मनुष्य तो भला इस कोटि में सर्वोच्च है परन्तु सभ्यता और व्यवस्था किसी शासन की मांग करती है, जिसमें अधिपति के स्वरूप का उद्‌भव होता है और शासन के विभिन्न रूपों का संगठन भी लोकतंत्र में से एक है जिसमें सभ्यता एवं व्यवस्था की शर्त पर विष्व के बड़े भाग द्वारा आज शासन व्यवस्था के रूप में अपना लिया गया है, जबकि पंचायतयी राज्य भारतीय जीवन पद्धति गहराई तक उतरी हुई एक ऐसी व्यवस्था है, जिसमें वह आदिकाल से ही शासित होता आया है– इस अध्याय में शासन के इन्हीं दो प्रतिरूपों के बीच अन्तर्निहित संबंधों को अच्छादित करने का प्रयास किया गया है।

पुस्तक का पंचम अध्याय पृ0 –57–63 में ”आर्थिक प्रगति एवं पंचायती राज का विष्लेषण की गई है, आर्थिक, सामाजिक, अधोगित से निकलकर आधुनिक ज्ञान विज्ञान व तकनीकों को प्रकाष में आना तथा अपनी अतीत

की गौरवषाली उपलब्धियों का सहेजते हुए उनके आलोक में उर्ध्वगामी जीवन प्राप्त करना किसी भी देष के लिए एक चुनौती है, ऐसा तभी संभव है, जब सम्पूर्ण देष इसके प्रति सचेत गतिषील और सषक्त हो, पंचायती राज शासन के स्वरूपों में से एक है जिसके द्वारा स्थानीय लोगों को स्थानीय विकास के कार्यों का स्थानीय लोगों को स्थानीय विकास के कार्यों का स्थानीय स्तर पर सम्पादन करना होता है, निष्चित ही इन दोनों में एक गहरा अन्तर्सम्बंन्ध विधमान है। प्रस्तुत अध्याय में इसी अन्तर्ससम्बन्ध को उद्घाटित करने का प्रयास किया गया है।

पुस्तक का षष्टम् अध्याय पृ0 –64–76 में ”नवीन पंचायती राज व्यवस्था में उभरते हुए नेतृत्व का स्वरूप पर प्रकाष डाला गया है प्रस्तुत शोध पत्र में गाजीपुर जनपद (उत्तर प्रदेष) के जखनिया तहसील के क्षेत्र में पंचायत जखनिया के 78 ग्राम प्रधानों के साक्षात्कार के आधार पर यह समझने का प्रयत्न किया गया है कि बदलते पंचायती राज के स्वरूप में दलित नेतृत्व (Dulit Leadership) किस प्रकार की भूमिका का निर्वहन कर रहा है, क्या दलितों को प्राप्त आरक्षण क्या कर रहा है, क्या दलितों को प्राप्त आरक्षण का प्रावधान उनमें नेतृत्व के गुणों का विकास कर सका है और क्या वे परम्परातगत ग्रामीण शक्ति सुरक्षा को बदलने में सक्षम हो सके हैं? इन्हीं उद्देष्य के निमित अध्येता द्वारा जखनिया ब्लॉक के 78 ग्रामों को प्रतिदर्ष के रूप में चयनित किया गया है, प्रष्नावली पद्धति का प्रयोग कर आगमनात्मक पद्धति से निष्कर्ष निकाले गये हैं।

पुस्तक का सप्तम् अध्याय पृ0 –77–91 में ”ग्रामीण विकास में स्थानीय नेतृत्व, सरकारी कर्मचारियों के संबंध तथा भूमिका का विष्लेषण में यह वर्णन किया गया है कि” 73वें संविधान संषोधन के उपरान्त नयी पंचायती राज व्यवस्था के लागू होने के बाद ग्रामीण विकास की प्रक्रिया में स्थानीय नेतृत्व (विभिन्न पंचायती राज संस्थाओं के निर्वाचित लोगों) तथा शासकीय कर्मचारियों की भूमिका अत्यन्त ही महत्वपूर्ण हो गयी है, साथ ही इनके पारस्परिक संबंध भी ग्रामीण विकास प्रक्रिया को बहुत हद तक प्रभावित किये है। प्रस्तुत शोधपत्र में इनके अन्तर्सम्बन्धों तथा भूमिका की परीक्षण करने का प्रयास किया गया है।

पुस्तक का अष्ठम् अध्याय पृ0 –92–96 में ”लोकतंत्र में शान्ति षिक्षा की भूमिका पर प्रकाष डाला गया है इसमें एक बालक और उनके माता–पिता के बीच बाद, विवाद होने पर बच्चा ने बीच बचाओं करा कर शान्ति कायम किया, जिसमें पास पड़ोस, नेता, अन्याय, न्याय निष्पक्ष, विपक्ष, आरोप, प्रत्यारोप आदि बड़ी–बड़ी युद्ध की विभीषिका पर प्रकाष डाला गया है जिसमें सार्वांगिन विकास और शान्ति के लिए षिक्षा पर जोर दिया गया, जिसे तृतीय मनुजस्य नेत्रम की संज्ञा दी गई है।

पुस्तक का नवम् अध्याय पृ0–97–109 में ”आतंकवाद लोकतंत्र के लिए एक गम्भीर समस्या पर प्रकाष डाला गया है कि ”18वीं–19वीं सदी अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में साम्राज्यवाद एवं उपनिवेषवाद अपने चरमोत्कर्ष के लिए जाना जाता है, 21वीं सदी आतंकवाद की चरमपरिणति और विष्वषांति के लिए राग–अलाप में इसे निपटने के रूप में जाना

जाएगा। यद्यपि 19वीं सदी में राष्ट्र को आजाद कराने के लिए आतंक का हिंसा का सहारा लिये थे। परन्तु उनका उद्देष्य सरकारी सम्पति/विदेषी नौकरषाहों को हानि पहुँचाना या ताकि उपनिवेषावाद राष्ट्र स्वतंत्र हो सके लेकिन वर्तमान का आतंकवाद ठीक इसका उल्टा है ये सब सफल नहीं होने साधारण नागरिकों के जान के साथ खूनों की होली खेले हैं और उसमें, शीत युद्ध के दौरान विज्ञान एवं तकनीकी का जितना विकास हुआ उतना 18वीं और 19वीं सदी में नहीं हुआ था, तो यह इस पुस्तक में दिखाया गया है कि किस तरह से आज आतंकवाद से सामाजिक परिवेष में आषान्ति और खॉफनाक के माहॉल में जीने को विवस है।

पुस्तक का दसम् अध्याय पृ0–110–112 में अध्यात्मिनिष्ठ षिक्षा विभिन्न समस्याओं का समाधान पर प्रकाष डाला गया है कि "एक ओर 21वीं सदी उदारीकरण, निजीकरण, औद्योगिकरण, वैष्वीकरण, सूचना तकनीकी, विज्ञान अन्तरिक्ष एवं भौतिक विज्ञान एवं भौतिकवादी संस्कृति के दौर से प्रगतिषील एवं गतिषील है आर्थिक क्षेत्र में संसेकस नई उच्चाई स्पर्ष कर रहा है और चिकित्सा के क्षेत्र में प्रगति ने नागरिकों को औसत आयु में वृद्धि कर दी, आगे जातिवाद, संघवाद, सम्प्रदायवाद, भाषावाद, नषलवाद, आतंकवाद बढ़ती हिंसा आदि तमाम अनैतिक कार्य जो अपनाए गये हैं इन सभी का निदान मूल्यपरक षिक्षा की जड़े (आध्यात्मनिष्ठ षिक्षा) में संचित है। अध्यात्मनिष्ट षिक्षा से ही चारित्रिक सुदृढ़ता और नैतिक आचरण की बुनियाद खड़ी है जो सामाजिक सामांजस्य एवं मानसिक विकास के लिए तत्व है, इस सामाजिक विज्ञान में भोगवादी/और भौतिकवादी संस्कृति का अंधानुकरण कर रहे और सारी विलसिता संबंधी आवष्यकताओं के परिपूर्ण हो कर घी में डूबकी लगा रहे हैं, परन्तु शारीरिक, मानसिक, पारिवारिक एवं शैक्षणिक समास्याओं के गिरफ्त में है, शांति के लिए छटपटा रहे हैं कोई विकल्प नहीं दिखता तब अध्यात्म की ओर उन्मुख होते है, मन ,वचन एवं कर्म में एक रूपता विकास मानसिक शांति एवं सद्गुण केवल आध्यात्मनिष्ट षिक्षा से ही संभव है। जैसा की गौतम बुद्ध का कथन भी अध्यात्मिक रूप से संबंधित है कि पूर्ण शांति का निवास वहाँ हो सकता है, जहाँ अहंकार नहीं, दुर्भाग्य पूर्ण विचार क्रोध अहंकार द्वेष की भावना अनावष्यक अतिमहात्वाकांक्षा और स्वहीत का तिलांजलि अध्यात्मनिष्ठा से ही दी जा सकती है।

पुस्तक का ग्यारवाँ अध्याय पृ0 –113–126 में "षब्द ज्ञान विष्व पहचान विष्वव्यापी परिप्रेक्ष्य में साक्षरता पर प्रकाष डाला गया है कि "षिक्षा जीवन का सम्पूर्ण शास्त्र है। षिक्षा सामाजिक उद्देष्य की पूर्ति का एक सामाजिक साधन है, जिसमें समाज अपने ही अस्तित्व को सुनिष्चित करता है, इस उद्देष्य ज्ञान पिपासा जगाने के साथ व्यक्ति को संस्कारी विचारवाण और संयमी बनाना प्राणी बनाना है षिक्षा व्यक्ति के जीवन को तार्किक बनाती है और अच्छे बुरे की समझ पैदा कर निष्पक्ष निर्णय लेने की क्षमता प्रदान करती है इसका उद्देष्य एक स्वस्थ नागरिक का निर्माण करना है जो अपने दायित्वों का निर्वहन स्वतंत्र रूप से कर सके। इस तरह की समीक्षा इस अध्याय में की गई है।

पुस्तक का 12वां अध्याय में पृ0– 127–135 ”मानवाधिकार पर प्रकाष डाला गया है कि ”मानवाधिकार यानि कि मानव का अधिकार को प्राप्त करने में विष्व के लगभग देषों में सामाजिक न्याय के लिए समानता के लिए क्रान्ति हुई है, जिसमें मानवाधिकार संबंधित कानून भी बनाई गई है जैसे में जीवन का अधिकार, स्वतंत्रता का अधिकार, सम्पत्ति का अधिकार, राजनीतिक अधिकार, कानून के समक्ष समानता का अधिकर, सामाजिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक अधिकार का विषद वर्ण किया गया है।

पुस्तक का 13वां अध्याय पृ0–136–160 में ”स्थानीय स्वायत्त शासन पर प्रकाष डाला गया है कि ”किसी भी जनतांत्रिक शासन व्यवस्था में स्वायत शासन का विषेष महत्त्व होता है स्थानीय स्वषासन जनता की स्थानीय समस्याओं का समाधान के लिए जन प्रतिनिधियों द्वारा शासन के रूप में नया बताया गया है, जिसमें विष्व के स्वायत शासन के लाभ और प्रषासन में स्थानीय स्वषासन का महत्त्व आदि की विस्तृत चर्चा इस अध्याय से प्राप्त की जा सकती है।

पुस्तक का 14वां अध्याय पृ0 –161–168 में ”भारतीय संविधान में निहित सामाजिक न्याय के उपबंध पर प्रकाष डाला गया है कि ”न्याय समाज दर्षन की एक ऐसी बुनियादी धारणा है जिस पर सामाजिक चिंतन के आधार पर विचार होता रहा है, साधारण बोल–चाल की भाषा में जिसे न्याय कहा जाता है इसमें तीन व्यापक आयाम है, सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक न्याय कहा जाता है, सामाजिक न्याय का संबंध व्यक्ति के अधिकारों और सामाजिक नियंत्रण के बीच संतुलन से है, ”सामाजिक न्याय व्यक्ति के कुछ अधिकारों को सामान्य हित की बलिवेदी पर सामाजिक न्याय विचार का उद्देष्यों न केवल व्यक्ति और समाज के हितों में उपयुक्त समाधान लाना है बल्कि यह सामाजिक परिवर्तन महान आवष्यक अंग के रूप में वर्णित की गई है।

पुस्तक का 15वां अध्याय पृ0–169–176 में ”भारतीय संविधान की प्रस्तावना में सामाजिक न्याय का निहितार्थ पर प्रकाष डाला गया है कि ”बाबा साहेव आम्बेडकर के नेतृत्व (प्रारूप समिति के अध्यक्ष) में हुआ ताकि विष्व का सर्वोच्च संविधान का निर्माण हो सके जिस प्रकार विष्व के प्रत्येक देष के विचार एवं धर्म का अपना दर्षन होता है, उसी प्रकार प्रत्येक संविधान का अपना एक दर्षन होता है जिसमें एक राष्ट्र और एक मत वाला भारतीय संविधान की प्रस्तावना का सम्पूर्ण विवरण मिलता है जो सभी शब्दों को एक–एक कर उसके बारे में समझाया गया है, जो इस अध्याय के अंतिम शीर्षक में वर्णित की गई है।

निष्कर्ष:–

यह कहा जा सकता है कि ”लोकतंत्र और सामाजिक न्याय के क्षेत्र में डॉ0 गोपाल प्रसाद के राजनीतिक, प्रषासनिक आर्थिक, शैक्षिक, औद्योगिक, न्यायिक, मानवाधिकार, स्थानीय शासन, भारतीय संविधान की प्रस्तावना न्याय का निहितार्थ आदि इसमें संकलित तमाम अध्यायों के अध्ययन के रूप में प्रस्तुत की जा सकती है कि विष्व के

सामाजिक परिदृष्य पर फोकस किया गया है, जिसमें त्रुटि किसी प्रकार नहीं दिखता है, इसकी सराहना शब्दों से नहीं की जा सकती है, अगर की भी जा सकती है तो बहुत ही कम होगा।

परन्तु इसके साथ–साथ यह भी कहा जा सकता है कि शब्दों की शब्द कोष भी देना चाहिए था ताकि शब्दों को सरल भाषा में समझा जा सके फिर भी इस पुस्तक की सभी अध्यायों की विवरण बहुत ही सुन्दर तरीके से की गई है, जो शोध के लिए उपयोगी पुस्तक है।